SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

u;s foe'kksZ ds vxqvk jktsUæ ;kno

jkgqy] शोध छात्र, हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उत्तरप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
jkgqy] शोध छात्र,
हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 07/01/2023
Revised on : -----
Accepted on : 14/01/2023
Plagiarism : 00% on 07/01/2023

'kks/k lkj

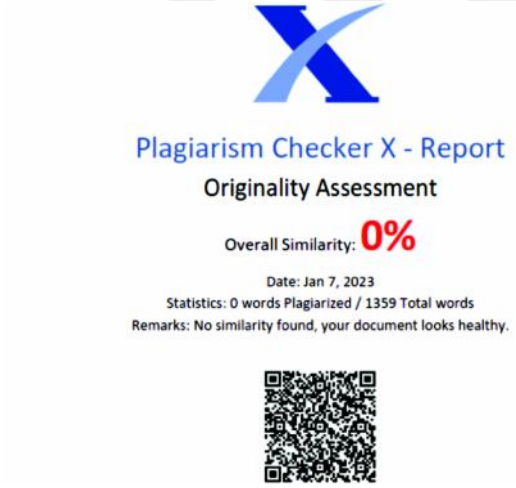

जीवन में सुख और दुःख व्यक्ति को एक नया आयाम प्रदान करता है। सुख और दुःख हमारे पारिवारिक सदस्य नहीं मेहमान है, बारी–बारी से आयेंगे कुछ दिन ठहरकर फिर चले जायेंगे, अगर वो नहीं आयेंगे तो हम अनुभव कहाँ से लायेंगे।

eq[; 'kCn

thou] lq[k] nq[k-

कवि गोपालदास नीरज जी की पंक्तियाँ हैं–

शूलों का अस्तित्व जहाँ है,
फूल वहीं तो मुस्कराता है....
जहाँ अंधेरे की सत्ता है,
जुगनू वहीं चमक पाता है.....
जीवन पूर्ण नहीं है
पाकर केवल सुख के मधु क्षण.....
सुख भी तब सुख कहलाता है
जीवन में जब दुःख आता है।।

जीवन में दुःख किसी को बर्बाद करता है तो जिन्दगी में दुःख किसी को आबाद भी करता है। हाँ हिन्दी साहित्य के विमर्शों के अगुआ राजेंद्र यादव का जीवन भी ऐसा रहा। बचपन में लगी उनके पैर की गहरी चोट ने अपाहिज तो बना दिया लेकिन उनमें अध्ययन की रूचि को उद्दीपित कर दिया, जिन्होंने अपने 'हंस' पत्रिका के संपादकीय और कथा–साहित्य लेखन से 'नई कहानी' वर्तमान में प्रचलित कई विमर्शों मसलन स्त्री विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, आदिवासी विमर्श, जेण्डर विमर्श और दलित विमर्श को साहित्य के केन्द्र में लाने और उसे निर्णायक स्थिति पर पहुँचाने में भी कथाशिल्पी और संपादक के रूप में राजेन्द्र यादव की महती योगदान है। कथा सम्राट प्रेमचंद द्वारा सन् 1930 में प्रकाशित पत्रिका 'हंस' जो सन् 1953 में 23 साल बाद बंद हो गयी थी।

33 साल बाद सन् 1930 में प्रकाशित पत्रिका 'हंस' के पुर्नप्रकाशन की जिम्मेदारी, 31 जुलाई 1986 से एक बार जो उन्होंने दिव्यांग होते हुए भी अपने कंधे पर ली, तो इसके प्रकाशन का दायित्व अपने जीवन के अंतिम क्षणों तक 28 अक्टूबर, 2013 यानि पूरे 27 साल तक बेबाकी और निर्भय होकर निभाया। नये विमर्शों के अगुआ राजेन्द्र यादव का मानना है कि जब तक सामाजिक रूढ़ियाँ, परम्परा एवं मान्यताएँ हमारे समाज में रहेगी तब तक समाज में न तो कोई बदलाव और न ही सामाजिक परिवर्तन संभव होगा। यदि देश और समाज में परिवर्तन लाना है तो सामाजिक रूढ़ियों, परम्परा एवं मान्यताओं से असरदार खिलाफत करनी होगी। ''राजेन्द्र यादव नायक हैं या खलनायक या सहनायक, इसका फैसला आलोचक–समालोचकों पर छोड़ दिए जाए। लेकिन मेरे मत में 'विमर्शों के नायक' के रूप में राजेन्द्र जी ने अपने लिए जो जगह अर्जित की है, वहाँ से उन्हें आसानी से अपदस्थ नहीं किया जा सकेगा। संभव है राजेन्द्र यादव जी बहुतों के लिए एक 'आदर्श सन्दर्भ' न भी हो, लेकिन निःसन्देह एक 'अपरिहार्य सन्दर्भ' हैं। दिक्कत तब होती है जब उन्हें सिर्फ साहित्य, विशेषतः कथा– साहित्य तक ही सीमित रखा जाता है, जबकि विगत वर्षों में उनका कैनवास विशाल व इन्द्रधनुषी हो चुका है। उनमें जरूरी सरोकारों को लेकर एक 'एक्टीविस्ट' कुलाचे मारता रहता है। यही एक्टीविज्म उनकी समकालीन सवर्णवादी साहित्यिक मंडली को नापसंद है। हजार असहमतियों के बावजूद क्या हम इंकार कर सकते हैं कि विगत 20–25 वर्षों के दौरान उन्होंने हंस के माध्यम से हिन्दी जगत को विमर्शों से आन्दोलित रखा और समृद्ध किया है? आज हाशिए के मुद्दे (स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, अल्पसंख्यक साम्प्रदायिकता, धर्मनिरपेक्षता आदि) हिन्दी चिन्तन जगत के केन्द्र में है।''[1]

स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, अल्संख्यक साम्प्रदायिकता, धर्मनिरपेक्षता आदि वर्तमान साहित्य में हाशिए के मुद्दे बने हुए तो इसका प्रमुख कारण राजेन्द्र यादव के अथक प्रयास है जिन्होंने अपने हंस, विवेक और कथा के माध्यम से इन वंचित समाज को चेतना की दृष्टि प्रदान की। राजेन्द्र यादव 27 साल तक हंस पत्रिका के माध्यम से विमर्शों की एक चेतना ही ला दिए थे जो विमर्श को एक नया आयाम भी देते हैं। हंस पत्रिका से न जाने कितने अनगिनत लेखक और लेखिकाएँ भी बने जो आज साहित्य में इक्कीसवीं सदी के लेखक के श्रेणी में हैं। आज साहित्य का क्षेत्र सक्रिय नहीं दिखता है खासकर हाशिए के समाज को लेकर आज के रचनाकारों की स्थिति यथार्थ से वाकिफ़ न होने की है। यही कारण है कि स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि केवल किताबी विमर्श तक ही सीमित रह गया है। लेखक आज लेखक होने का मतलब शायद वह अब भूल चुका है। वर्तमान में कई पत्रिका समाज को स्वच्छ नजरिया प्रदान कर रही है, लेकिन क्या वह नजरिया है जो राजेन्द्र जी आज से 35 साल पहले अपने हंस में रखते थे। दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि विमर्श का आन्दोलन शुरू करते हैं तो आज इतना क्यों शिथिल पड़ गया है। वास्तव में राजेन्द्र यादव एक प्रबुद्ध एवं दूरगामी साहित्यकार हैं, वे राहों के राही नहीं हैं अपितु उन्होंने जो लिक तैयार कर दी देश और समाज के लिए उस पर नयी पीढ़ी चलती रहेगी। ''हिन्दी के प्रतिष्ठित कथाकार और हंस के प्रखर संपादक राजेन्द्र यादव सिर्फ एक व्यक्ति नहीं थे, एक विचार और आन्दोलन थे। उन्होंने बेबाक तरीके से अपने समय के सच को बयां किया। अपने लेखन से उन्होंने प्रतिगामी ताकतों से मुठभेंड़ किया। उन्होंने हिन्दी साहित्य में जब गढ़ी गयी हर मूर्ति को ध्वस्त किया और वर्चस्ववादी लेखन को चुनौती दी।''[2] राजेन्द्र यादव विमर्शों के अगुआ और प्रतिपक्ष की आवाज है। उनके 27 साल साहित्य के लिए विमर्शों और नयी कहानी का आन्दोलन था जो आज साहित्य को एक नया आयाम दे रहा है।

राजेन्द्र यादव जी के सामाजिक न्याय के चिन्तन के केन्द्र में दलित, स्त्री, आदिवासी, पिछड़ा व अल्पसंख्यक समाज भी है। राजेन्द्र यादव जी अतीत की गहराइयों व ऐतिहासिक बोध से जुड़े होने के साथ–साथ वर्तमान और भविष्य के प्रति भी बेहद सचेत थे। राजेन्द्र यादव का हंस का संपादन, विमर्शों का आन्दोलन और नयी कहानी का आन्दोलन हिन्दी साहित्य में क्रान्तिकारी कदम था। वास्तव में देखा जाए तो हाशिए के विमर्श को आन्दोलन रूप साहित्य की लोक प्रसिद्ध पत्रिका हंस पत्रिका और राजेन्द्र यादव का संपादकीय है। ''राजेन्द्र यादव का सम्पूर्ण कथा साहित्य और सम्पादन कार्य एक लेखकीय कैनवास के बहु आयामी होने का आभास देता है।''[3] राजेन्द्र यादव का संपादकीय विमर्शों का केन्द्र है, तो स्त्री की अस्मिता का संघर्ष उनकी कहानियों का केन्द्रीय विषय है जिसके माध्यम से भारतीय समाज को गतिशीलता प्रदान करते हैं। राजेन्द्र यादव के कथा–साहित्य में कई महत्वपूर्ण समस्याओं

का निरूपण परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप में हुआ है। इन समस्याओं के अन्तर्गत वैवाहिक सम्बन्ध, पारिवारिक समस्याएँ, सामाजिक समस्याएँ, मनोवैज्ञानिक समस्याएँ, राजनैतिक समस्याएँ, अर्थिक आदि समस्याओं का चित्रण राजेन्द्र यादव ने किया है।

fu"d"k

राजेन्द्र यादव ने अपने सम्पादकीय और कथा लेखन में नारी विमर्श, दलित विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि के प्रत्येक पहलू को सूक्ष्मता से व्याख्यायित किया है। ''राजेन्द्र यादव के कथा–साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है– तत्कालीन समय की परिस्थितियों को सच्चाई के साथ प्रस्तुत करना। आधुनिक समय में पारिवारिक और सामाजिक स्तर पर जो बदलाव आए हैं, वह व्यक्ति के आपसी सम्बन्धों पर बहुत ही बुरा प्रभाव डाला है। सामाजिक वर्ग–विषमता बढ़ने से अमीर की अमीरी और गरीब की गरीबी बढ़ी है। मजदूरों का शोषण पूँजीपति लगातार करते जा रहे हैं। यांत्रिक साधनों के बढ़ने से बेरोजगारी में बढ़ावा हुआ है, साथ ही साम्प्रदायिकता तथा .....[4] राजेन्द्र यादव के लेखन में एक जिंदगी है। उनके विमर्श आज साहित्य का एक अभिन्न वाद बन गया है। स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी साहित्य को नया मोड़ देकर उसे युग जीवन से जोड़ने का दायित्व जिन लेखकों ने निभाया उसमें राजेन्द्र यादव का नाम अग्रणी है जिस कारण हंस विवेक राजेन्द्र यादव को नये विमर्शों के अगुआ भी कहते हैं। अन्त में राजेन्द्र यादव के पंक्तियों को व्यक्त करना चाहूँगा–

''जब कुछ भी नहीं था तो शब्द था और जब कुछ भी नहीं होगा'– पता नहीं कब से यह वाक्य मेरे मन में गूँज रहा है और याद आ रहे हैं कुछ विशेषण शब्द अजर, अमर, अनादि, अनंत, अक्षय और अक्षर है– शब्द ब्रह्म है।''[5] राजेन्द्र यादव की आवाज प्रतिपक्ष की आवाज है। उन्होंने विवादों से हार नहीं मानी उनका जीवन हिन्दी साहित्य में प्रेरणा है।

lUnHkZ lwph

1. जोशी रामशरण, *'जेबी संसद या विमर्शों का नायक'* पाखी, संपादक–प्रेम भारद्वाज, सितम्बर, 2011, नोएडा, उ0प्र0, पृष्ठ–59।
2. *'राजेन्द्र यादव प्रतिपक्ष की आवाज',* संपादक–डॉ0 विश्वमौली, डॉ0 राम बचन यादव, साहित्य भंडार प्रयागराज, द्वितीय संस्करण–2021, पृष्ठ–09।
3. पनेसर परमजीत एस0, *'राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में सामाजिक चेतना'* चिंतन प्रकाशन, कानपुर, संस्करण–2017 (प्रथम) पृष्ठ–23।
4. परमार विष्णु आर0, *राजेन्द्र यादव के कथा–साहित्य में चित्रित समस्याएँ,* उत्कर्ष पब्लिशर्स, कानपुर प्रथम संस्करण–2021, पृष्ठ–230।
5. 'मेरी तेरी उसकी बात', जुलाई अंक, *हंस* पत्रिका, 2022 से।

****